International Journal of Information Movement Vol.I Issue IX (January 2017)

Website: www.ijim.in ISSN: 2456-0553 (online) Pages 199-204

आज का समाज और चित्रा मुद्गल की कहानियॉ

डॉ. सुषमा ठाकुर
(संयुक्त प्राध्यापिका)
हिन्दी विभागाध्यक्षा
कुमारी विद्यावती आनंद डी.ए.वी. महिला महाविद्यालय, करनाल (हरियाणा)
Email- sushmakva97@gmail.com

प्रत्येक साहित्यिक रचनाकार अपने युग को परखता है, समझता है, महसूसता है और शब्दबद्ध करता है । चित्रा मुद्गल आज के युग की जानी–मानी रचनाकर हैं । उनकी कहानियॉ पढ़कर ऐसा लगता है जैसे हमारे ही आस–पास घटित होने वाली घटनाऍ ही उनके विषय हैं, हम में से ही कोई या हमारे ही जाने–पहचाने लोग उनकी कहानियों के पात्र हैं । तभी उनकी सभी रचनाऍ अपने बहुत ही करीब की लगती हैं जैसे हमारे अपने ही अनुभवों, पीड़ाओं, खुशियों, दुःखों की अभिव्यक्ति हों ये कहानियॉ । हम देख रहे हैं कि समाज बहुत तेजी से बदल रहा है । पुराने मूल्य, सम्बन्ध चरमरा रहे हैं, नए गढ़े जा रहे हैं । चित्रा जी की कहानियॉ इन्हीं बदलावों को बहुत सूक्ष्मता से पकड़ती हैं । कुछ उदाहरण निम्नलिखित हैं–

बढती स्वार्थपरताः– आधुनिक समाज में संवेदनशून्यता के अजीबोगरीब उदाहरण देखने को मिलते हैं । धन की लोलुपता की इस हद तक अति कि एक साधारण मन भी शर्मसार हो उठे और एक गहरी पीड़ा का अनुभव करे; इस सन्दर्भ में चित्रा जी की दो कहानियॉ– 'मुआवज़ा' और 'लकड़बग्घा' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं । **'मुआवजा'** शैलू नामक विवाहिता लेकिन अब पिछले छह वर्ष से पति सुमित से अलग रहती नवयुवती के माता–पिता की दयनीय दशा को दर्शाती है । शैलू पढ़ी–लिखी आधुनिक विचारधारा वाली, माता–पिता की लाड़ली सन्तान थी । परिवार में किसी तरह की रोक–टोक न होने के कारण आकर्षक व्यक्तित्व की स्वामिनी शैलू ने मॉडलिंग और विमान परिचारिका के क्षेत्र को आजीविका हेतु चुना और दोनों क्षेत्रों में सफल भी हुई । एक बार जिस विमान में वह कार्यरत थी, उसका अपहरण कर लिया गया, अपनी बहादुरी और साहस का परिचय देते हुए शैलू ने अपहरणकर्त्ताओं से टक्कर ले कई सवारियों की जान बचाते हुए अपनी जान गॅवा दी । देश भर के समाचार पत्रों ने शैलू के साहस को सराहा । सरकार ने उसके लिए कई पुरस्कारों के साथ–साथ एक बड़ी पुरस्कार राशि की भी घोषणा की । पुत्री से भावनात्मक रूप से बहुत गहराई से जुड़ी मॉ मधु बिल्कुल टूट गई और विक्षिप्त सी हो गई । असहाय पिता पुत्री की मृत्यु और पत्नी की लगभग विक्षिप्तावस्था को बहुत कठिनाई से सहन करने का साहस जुटा पा रहे हैं ऐसे में एक दिन शैलू से छह वर्ष पहले आपसी सहमति से अलग हो गए उसके पति का फोन आता है और वह समाचार पत्रों को दिए गए ससुर जी के इन्टरव्यू पर भड़कता है, "यह अखबारों में अनाप–शनाप वक्तव्य क्यूं दे रहे हैं आप लोग? ××× हतप्रभ हो उठे सुनकर कि भला इस भाषा में उनसे बोलने की असभ्यता कौन कर सकता है । लेकिन भांपते देर नहीं लगी। बरसों बाद फोन पर सुमित का आवेशपूर्ण स्वर सुन रहे हैं । ×× वे विचलित नहीं हुए । मैं तुम्हारा आशय नहीं समझा !
मुआवजे की रकम 'वनिता आश्रम' को दान करने का अधिकार आप लोगों को कैसे मिल गया ? मैं शैलू का पति हूँ, उसकी किसी भी प्रकार की सम्पति पर मेरा अधिकार पहले बनता है, चाहे तिजोरी में रखूं या कूड़े में झोंक दूँ ।
यह धौंस है ?
धौंस नहीं, सच्चाई है ।
सच्चाई, कैसी सच्चाई ? जब तुम लोग अलग हो चुके हो और पिछले छह वर्षों से पति–पत्नी के नाम पर कोई रिश्ता तुम्हारे मध्य शेष नहीं बचा, तब उसकी किसी भी चीज पर तुम्हारा हक कैसे बनता है ?

अलग रह रहे हैं डैडी, अलग हो तो नहीं गए थे । ×× हमारे बीच पेपर्स हस्ताक्षरित हुए नहीं ... ××× बहरहाल मैंने यही बताने के लिए फोन किया है । मुआवजे के कागजात मैंने प्रमाण–पत्रों सहित एयर इंडिया के मुख्यालय में दाखिल कर दिए हैं । आप दोनों अनर्गल वक्तव्यों से मेरे निजी मामले को व्यर्थ में न उलझाएँ ! यह मेरी व्यक्तिगत, पारिवारिक, सामाजिक प्रतिष्ठा का प्रश्न है । ××× अब और सहन नहीं हुआ । क्रोध और उत्तेजना से आपा खो बैठे– प्लीज, स्टाप दिस ब्लडी ढोंग! स्टाप इट! रसीवर लगभग पटकते हुए से वे चीखे और निकट पड़ी चौकी खींच निढ़ाल से वहीं बैठ गए । ×× गनीमत है इस समय मधु सामने नहीं है, वरना उसकी करुण दृष्टि में लपलपाते हुए प्रश्नों को झेलना दूभर हो उठता । वह उन कोंपलो की टीसों की मूक गवाह है जो पनपने से पूर्व अपनी डाल पर पनाह पाए कठफोड़वे द्वारा खूंट ली गई ... जिस हालत में शैलू घर आई थी ... जबान झूठ हो सकती थी, देह पर छलछलाए हुए दाग नहीं जो सिगरेट चुभो चुभोकर उसके आत्मसम्मान को छलनी करने की चुगली खा रहे थे । छह साल के दीर्घ अन्तराल के बीच कोई एक दिन भी उन्हें याद नहीं जब सुमित से बात करके शैलू के माथे पर पुता हुआ तनाव पलांश ढीला हुआ हो और वह उस रात झपकी भर सोई हो ।"[1] ... कैसे मूल्यहीन सम्बन्ध हो गए हैं आज के समाज में, किसका भरोसा किया जाए और किसका नहीं, समझ में ही नहीं आता । शैलू और सुमित ने प्रेम विवाह किया था, तब भी आपसी समझ विकसित नहीं हो पाई उनके बीच । युवा पुत्री की मृत्यु, दुःख से लगभग पगलाई और सदमाग्रस्त पत्नी, उस पर धमकियॉ देता लालची दामाद, अत्यन्त मार्मिक कहानी है–मुआवजा ।

इसी तरह के विषय को लेकर लिखी एक अन्य कहानी है– लकड़बग्घा । गॉव में रहने वाली विधवा **'पछॉहवाली'** शहर में आधुनिक संसाधनों से युक्त घर में रहने वाली अपनी विवाहिता बहन के यहॉ कुछ दिन के लिए रहने जाती है और वहॉ उसके संस्कारी बच्चों को पढ़ाई–लिखाई में लगा देखती है तो बहुत प्रभावित होती है । बहन के यह समझाने पर कि वह भी अपनी इकलौती बेटी की पढ़ाई पर ध्यान दे, शिक्षा पाकर बेटी का जीवन बदल जाएगा । वह वापिस गॉव लौटकर अपने घर के पुरूषों से अपनी बेटी की पढ़ाई की व्यवस्था करने का आग्रह करती है तो अपनी इस साधारण सी इच्छा की पूर्ति के लिए भी उसे घर में विद्रोह करना पड़ता है पर उसकी कोई सुनवाई नहीं होती क्योंकि घर के मुखिया पुरूष को ऐसा आभास होता है कि भाई की जो विधवा आज बेटी की शिक्षा का अधिकार मॉग रहीं है, भविष्य में उसके हिस्से की जमीन–जायदाद की मॉग भी करेगी । कहानी का अन्त रूह कॅपा देने वाला सा है । चार दिन से भूखी–प्यासी पछॉहवाली की पुकार पर जब जेठ लम्बरदार उससे मिलने आते हैं और उससे कहते हैं कि बिटिया पुन्नू की पढ़ाई और नहीं होगी तब पछॉहवाली रोष से कहती है–"पुनिया आगे पढ़ेगी ... हम पढैइबे वहिका ... पुनिया कै महतारी जिन्दा है अबै ! ×× उत्तेजना से कॉपती उनकी देह अपने वश में नहीं थी ।

पल भर को पूरे घर को जैसे सॉप सूँघ गया । लम्बरदार की छाती में पछॉहवाली का दुस्साहस बल्लम की नोक सा चुभा । एक मामूली सी मेहरिया की इतनी मजाल कि वह उनके मुँह लगे ? उनसे प्रश्न करने वाले और अपना निश्चय सुनाने वाले पैदा हो गए इस देहली में ? ××× उनकी सत्ता को चुनौती देता यह मुँह एक बार खुल आया है तो फिर न जाने कितनी दफे कहॉ–कहॉ खुले । एक कोशिश और आजमा देखें ... घर की चिनगारी घर के चूल्हे में ही तुपी रहे तो बेहती होगा । अपने ऊँचे, तीखे, रूक्ष स्वर को लम्बरदार ने किंचित सहिष्णु बनाया– पुनिया का भला–बुरा सोचना हमारा काम है । उचित होगा कि तुम अपनी सीमा में रहो ×××

हमका पुनिया की पढ़ाई की बाबत प्रबन्ध चही, लम्बरदार ...

पछॉहवाली ! लम्बरदार का संयम ढह गया एकाएक !

हॉ, हॉ, हमका पक्का प्रबन्ध चही ... पुनिया हमरी भान्ति जाहिल–काहिल न रही, आज हम चार अक्षर पढ़ी–लिखी होतिन तौ कोहू के आसरे चौका–बसन निबटावति पड़ी रही होतिन ! हमार जिनगी कढ़ितल–घसिटत बीत गई । हमार भाग्य ... मगर हम अपनी बिटिया के पढ़इबै, वहिका अपने बाप की नाई डाकदरी पढ़ैक है ... पुनिया डाकदर बनी इहॉ सम्भव न होई तो हम वोहिका अपनी बहिनी के घर इलाहाबाद म राखि के पढ़इबै । हमार अलगा–अलगी कर दियो, लम्बरदार ! ××× लम्बरदार के नथुने क्रोध से फूल गए, ×× मा ऽऽऽ ... चुप रहती है या नहीं ... ××× बाहर बॅगले से हमारी

भरी राइफल टॅगी हुई है । फौरन उतारकर ले आओ ।[2]'' ... और जब बंदूक के डर से भी वे पछॉहवाली को डरा नहीं पाए तो एक दिन सुनने में आया कि शौचादि को बाहर गई पछॉहवाली को लकड़बग्घा उठा ले गया ... वह लकड़बग्घा कौन होगा, सहज ही विचारा जा सकता है । पुरूष सत्तात्मक परिवार और समाज में अपने अधिकार के लिए लड़ती एक असहाय स्त्री की आवाज कैसे बर्दाश्त की जा सकती है, पुरूष के लिए चुनौती देती स्त्री को स्वीकारना इतना सरल तो नहीं ही है ।

बेईमानी का बोलबालाः– वर्तमान समय में आपसी घरेलू सम्बन्धों से लेकर व्यावसायिक सम्बन्धों तक सब जगह ईमानदारी ढूंढना सरल नहीं है । एक छोटी सी कहानी 'बेईमान' समाज के विभिन्न वर्गों के नकाब बड़ी कुशलता से उतारती प्रतीत होती है । एक पीढ़ी अथवा एक वर्ग द्वारा की गई बेईमानी कितनी सहजता से अगली पीढ़ी अथवा दूसरे वर्ग को धरोहर के रूप में स्थानांतारित हो जाती है, पता ही नहीं चलता । चित्रा मुद्गल की यह कहानी समाज में यहॉ–वहॉ डोलते कई ऐसे सत्य दिखाती है जिन पर अक्सर निगाह नहीं जाती । कहानी में एक अनाथ बच्चा, जोकि रेलवे प्लेटफार्म पर पत्र–पत्रिकाएँ बेचने का काम करता है, उसकी मनः स्थिति और दृष्टिकोण को लेकर लिखी गई यह कहानी एक मनोवैज्ञानिक कहानी भी लगती है । बच्चे को 'राजधानी' में जिसे वह ठंडी गाड़ी भी कहता है; पत्रिकाएँ बेचना बहुत पसंद है क्योंकि वहॉ का सुगन्धित वातावरण और उसकी सवारियों की शालीनता और सौम्यता उसे अच्छी लगती है । लेकिन उसी गाड़ी में एक दिन वह लोगों की बेईमानी और प्रताड़ना का शिकार होता है । उसका अच्छा–बुरा अनुभव कुछ इस तरह का होता है, ''बोहनी अच्छी की डिम्पल कपाड़िया ने! 'मुटापा कम करें' विषय पर केन्द्रित 'गृहशोभा' की सात–आठ प्रतियॉ दनादन बिक गई दोनों डिब्बों में । ××× निकर का खीसा रेजगारी के वजन से पींगे ले रहा है । बाबू भाई खुश हो जाएँगे आज की बम्पर बिक्री से । टिकट बाबू को दरवाजा ठेल भीतर दाखिल होता देख मन अचानक धुकपुका उठा । अभी तो दूसरे डिब्बे में कई एक सवारियों से कीमत वसूलनी है उसे । ××× दूसरे डिब्बे में पॉव देते ही समय की कमी से आशंकित मन लोगों के चेहरे ही बिसर रहा है! वह एकदम भूल रहा है कि उसने किस–किस को पत्रिका बेची और उनमें से कितनों से उसे पैसे लेने शेष हैं । ××× अचानक दिमाग में बालों पर चश्मा चढ़ाए हुए एक बीबी जी का चेहरा कौंधा । उन मेम सा'ब ने चार–पॉच पत्रिकाएँ इकट्ठी देखने को ली थी । ××× मेम सा'ब पैसे? संकोच छोड़कर उसने सीधा उन्हें सम्बोधित किया ।
पैसे! कैसे पैसे? दो ठो पत्रिका ... दुलहिन वाली ये 'मनोरमा' अऊर ... उसने उनकी गोंद में औंधी पड़ी हुई पत्रिका की ओर दृष्टि उचकाई । मेम सा'ब की अंगारे हुई भृकुटियॉ ऐनक की जगह जा बैठी– यू शट अप ... यह मेरी मनोरमा है, घर से लाई हूँ ...
उसका चेहरा डॉट खाकर पुँछी स्लेट हो आया । साहस बटोरकर उसने उन्हें दुबारा स्मरण कराने की कोशिश की– इकट्ठी नहीं लिए आप तीन–चार पत्रिकाएँ ...
किसी और को दी होगी तूने ईडियट ... ये राजधानी है कि छकड़ा? कैसे–कैसे उचक्कों को घुसाकर बैठा लेते हैं गाड़ी में ×××''[3] ... यह गरीब बच्चा उचक्का करार दे दिया जाता है जबकि गाड़ी से उतरते यह तथाकथित उचक्का एक और कटु अनुभव पाता है ... ''बाहर का दरवाजा खोलकर वह प्लेटफार्म पर पॉव देने को सतर्क हुआ ही था कि अचानक टिकट बाबू ने पत्रिकाओं के ढेर में से एक पत्रिका बड़ी कुशलता से उचक उसे चेतावनी पिलाई–बाप की गाड़ी है बे ।''[4] ... और फिर क्या था, मालिक ने पत्रिकाओं का हिसाब मॉगा और वह बेचारा बच्चा जब हिसाब पूरा नहीं दिखा पाया तो भरपूर दुत्कारा गया । बहुत अपमान सहा उसने और खून का घूंट पीकर रह गया। अत्यधिक चिरौरी करने पर मालिक ने उसे दोबारा काम करने का अवसर दिया और बाजू पर पत्रिकाओं का गट्ठर लादे वह लोगों से ठसाठस भरी रेलगाड़ी में बिक्री के लिए न घुस पाने पर बाहर से ही पत्रिकाएँ बेचने लगा । एक व्यक्ति ने सात रूपए की एक पत्रिका के लिए पचास रूपए दिए । छुट्टे लाने के बहाने वह अपनी दुकान की ओर भागा और रास्ते में छिप गया, प्लेटफार्म से गाड़ी छूट गई । अपने से कहीं बड़े लोगों के झूठ, बेईमानी ने सरल से एक बच्चे को भी बेईमान बना दिया । छोटे–छोटे झूठ, अन्याय और बेईमानियॉ किस तरह एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक स्थानांतारित होती हैं, बखूबी चित्रित होता है ।

बदलते स्त्री–पुरूष सम्बन्धः– चित्रा जी की कहानी 'ताशमहल' स्त्री की स्वतन्त्रता का मजाक उड़ाती सी कहानी है । अपने दम पर निर्णय लेने वाली स्त्री की स्थिति कभी–कभी आसमान से टपके खजूर में अटके वाली स्थिति हो जाती है । यह कहानी घुट–घुटकर जीने से आजादी की सांस लेने की सम्भावना की कहानी है । जहॉ दूसरे पति पुरूष की ज्यादतियों को एक सीमा तक सहन कर एक नौकरी पेशा स्त्री का अपने लिए खुले आसमान का चुनाव करने का प्रयास दिखाया गया है । शोभना का विवाह दिवाकर से हुआ और उनकी सन्तान 'बच्चू' के होने के बाद दिवाकर की मृत्यु हो गई । धीरे–धीरे शोभना ने अपने पुत्र के साथ जीना सीख लिया । सहज भाव से चलती उनकी जिन्दगी में निशीथ आया जो शोभना को पहले से जानता भी था और चाहता भी था 'बच्चू' को पितावत प्यार देने का आश्वासन और सुखद भविष्य के स्वप्न दिखाकर उसने शोभना से विवाह कर लिया । कुछ ही दिन सब ठीक चला फिर निशीथ को 'बच्चू' में दिवाकर नजर आने लगा और वह उसकी ऑख की किरकिरी बन गया । कामकाजी महिला शोभना के लिए बच्चू को पालना दूभर हो गया । ऑफिस में 'एजुकेशन फार वीमन्स इक्वलिटी' विषय की छह दिवसीय कार्यशाला का आरम्भ करवाना था और दो सप्ताह से बीमार बच्चू को अस्पताल में दाखिल करवाना था । घर में सास और पति दोनों का सहयोग उसे नहीं मिल पाता । एक ओर ऑफिस, दूसरी ओर घर में बीमार बच्चा, दोनो अति आवश्यक ... चुनाव का भी विकल्प नहीं । अनिच्छुक सास को बच्चे की जिम्मेवारी सौंपकर शोभना ऑफिस पहुॅचती है और कई दिन से आई स्थानांतरण की चिट्ठी को स्वीकार कर लेती है । घर की घुटन से सम्भवतः एक बारगी को तो छुटकारा मिले । उसकी स्थानांतरण की स्वीकृति अपने और बच्चू के लिए उठाया उसका एक बहुत कठोर कदम है लेकिन आर्थिक रूप से स्वतन्त्र होने पर ही कोई स्त्री इस तरह का चुनाव कर सकती है जो आज के युग में शिक्षित नौकरीपेशा स्त्री की ताकत को दिखाता है ।

स्त्री ने घर की चारदीवारी के बाहर अपने कदम रखे तो विशेषतः मध्यमवर्गीय घर–परिवार के ढॉचे में आमूलचूल परिवर्तन देखे गए । घरों की आर्थिक दशा सुधरी, मध्यमवर्ग उभरा । पति–पत्नी दोनों कमाने निकले तो बच्चों की परवरिश के तौर तरीके बदले । इस नए रंग–ढंग के कारण परिवारों ने बहुत कुछ पाया लेकिन खोया भी कम नहीं । परस्पर विश्वास पर ऑच आई । कुंठित मानसिकता वाले पुरूष वर्ग को स्त्री की कमाई तो चाहिए थी लेकिन उस पर विश्वास वह नहीं दिखा पाया; ऐसा अक्सर देखा गया । लेकिन स्त्री अब सशक्त है, सक्षम है, स्वयं से सम्बन्धित निर्णय ले सकती है और लेती हुई दिखाई देती है ।

चित्रा जी की कहानी 'प्रमोशन' कुंठित व ओछी मानसिकता वाले एक पुरूष की कथा है जिसकी पत्नी उसे अपने प्रमोशन की खुशखबरी देती है और उसे अपने बॉस डॉ. कोठारी को अपने घर भोजन हेतु आमन्त्रित करने को कहती है । वह डॉ. कोठारी से बात नहीं करना चाहता क्योंकि पत्नी के प्रमोशन को पचा नहीं पाता । उसे लगता है कि उसकी पत्नी ललिता का बॉस कोठारी के साथ कुछ–न–कुछ चक्कर है क्योंकि स्वयं उसका भी अपनी सहकर्मी रेखा के साथ विवाहेतर सम्बन्ध है । सुबह ऑफिस जाने से पूर्व ललिता द्वारा डॉ. कोठारी को आमन्त्रित करने की बात दोहराने पर वह चिढ़ जाता है और आपा खो बैठता है ... "लगा कि पुआल के ढेर को सुलगती तीली छू गई, मैं किसी कोठारी–वोठारी को फोन नहीं करता । जानता हूॅ, डॉ. कोठारी तुम पर इतने मेहरबान क्यों हैं ... इस कम्पनी में नौकरी करते हुए तुम्हें तीन साल भी पूरे नहीं हुए, तीन साल में इतना बड़ा प्रमोशन? विभाग में तुम्हारी बनिस्वत अनेक अनुभवी, योग्य व्यक्ति पड़े हुए हैं । इतने वर्षों से उनका नम्बर नहीं लग रहा है, तुम अचानक तीन सौ लोगों को पछाड़ विभाग की इंचार्ज हो गई?

सुनकर ललिता स्तब्ध हो उठी– इतना घृणित संशय! ××× आखिर पत्नी से नौकरी करवाते ही क्यों हैं उस जैसे लोग? ××× पुरूष पदोन्नति हो तो वह उसकी लगन और मेहनत का परिणाम है, स्त्री अगर अपनी लगन और परिश्रम से उन्नति करे तो वह उसकी प्रतिभा नहीं, किसी डॉ. कोठारी की अनुकम्पा है ... और बीच में शरीर आए बिना सम्भव नहीं!"[5] ... यह विद्रूप सच कामकाजी दम्पत्तियों में से कईयों के घरों का सच हो सकता है । खीझकर गुस्से में जब उसने ललिता को आदेश दिया कि "पारिवारिक हित में यही उचित होगा कि तुम मेरी ऑखों में धूल झोंकना छोड़कर सीधे–सीधे घर बैठो!'' ... तब ललिता का उत्तर था–''इसका निर्णय तुम कैसे करोगे?''

तो कौन करेगा?

न नौकरी मैंने तुमसे पूछकर की थी, न तुम्हारे कहने पर छोड़ूगी!''[6]
... हम अनुमान लगा सकते हैं कि एक–दूसरे पर शक एवं अविश्वास ने कितने ही दिन उनकी गृहस्थी को आगे बढ़ाया होगा ...।

बढ़ती चरित्रहीनताः– समाज लगातार बदल रहा है, सदा से यह परिवर्तन जारी है, निस्संदेह यह एक बड़ा सच है । आज के दौर का समाज ऊपर की ओर जाती विकास की सीढ़ियॉ तो चढ़ ही रहा है, साथ ही नीचे पाताल अर्थात् पतन की गहराइयों में भी सहजता से उतर रहा है–परिवर्तन के नाम पर, चेंज के नाम पर, नएपन के नाम पर । इसी विषय पर खरी उतरती चित्रा जी की एक कहानी है–'वाइफ स्वैपी' । नायिका हिमानी के पति के मित्र मेजर अहलूवालिया जब पति सुधीश की गैरहाजिरी में घर आते हैं और हिमानी के साथ बैठकर घर के नौकर बाबूराम से अपनी पसंदीदा ड्रिंक गुनगुने पानी में कांटेसा का लार्ज पैग बनवाकर पीते हैं । बातो–बातों में अपने समाज का एक अजीब सत्य भी उजागर कर जाते हैं । अपने समय की अच्छी खिलाड़ी रही हिमानी जब उनकी रूचि के खेल के विषय में उनसे पूछती है तब ''प्रत्युत्तर में बैठक की छत से एक जोरदार ठहाका टॅग गया ××× वह भौंचक मेजर अहलूवालिया का चेहरा देखती रह गई । ××× आप भी ...भला बताइए, इस उम्र में अब क्रिकेट, हॉकी? भई, सच तो यह है– बची–खुची जिन्दगी को अलमस्ती से जीना चाहते हैं, उन्मुक्त परिन्दों–से विचरते हुए, जीवन–रस का घूँट–घूँट पीते हुए ... और इसके लिए हम दोस्त अक्सर नए–नए खेल ईजाद किया करते हैं । पिछले दिनों हमारे विशेष क्लब में जिस खेल की तरंगें तरंगित हो रही हैं, उसे कहते हैं ××× ... 'वाइफ स्वैपी' ... यानि कि पत्नियों की अदला–बदली । ××× होता यह हैं कि महीने के आखिरी शनिवार की शाम हमारे क्लब की प्रतीक्षित ड्रिंक, डॉस, डिनर पार्टी आयोजित होती है । देर रात तक जश्न–ए–हंगामा चलता रहता है, साहब! अन्त में एक बड़े–से बियर जग में चिल्ड बियर की बोतलें उड़ेली जाती हैं । उफनते झाग में सभी सदस्य अपनी गाड़ी की चॉबी हौले से बियर जग में पड़ी चाबियों को उलट–पलट मिक्स करते हैं । फिर बारी आती है– चाबी उठाने की । कायदा है– जो सबसे पहले चाबी डालेगा वही सबसे पहले चाबी उठाएगा । सांस रोके, धड़कते दिलों से हम सभी चाबी उठाने की अपनी बारी का बेसब्री से इंतजार करते हैं क्योंकि जिस भी गाड़ी की चाबी हमारे हाथ लगेगी, उस गाड़ी के मालिक की पत्नी यानि कि उनकी मालिक–ए–आलम हमारी उस खुशनुमा रात की लॉटरी होगी । ×××
उसने टोका, पत्नियॉ आपत्ति नहीं करती ? भारतीय संस्कार आड़े नहीं आते ?
नॉट एट ऑल ... दे एंज्वाय ईक्वली।''[7]
...हमारे तथाकथित सभ्य, सुसंस्कृत, सुशिक्षित भारतीय समाज में ये कैसे–कैसे नए समाज उग रहे हैं? नएपन की आड़ में चरित्रहीनता के अनेकानेक खेल खुले रूप से खेले जा रहे हैं ।

आजकल नासमझ लड़कियों की खरीद–फरोख्त भी बहुतायत में सुनी जा सकती है । इस विषय को चित्रा जी ने 'सौदा' कहानी में उठाया है । इस कहानी में एक असहाय गुमराह लड़की की हालत को लेखिका ने अत्यन्त मार्मिका से दर्शाया है । एक रात नायिका अपने बच्चों को सुलाकर अपने ड्राइवर पति का इंतजार कर रही थी तो आधी रात में दरवाजा खटखटाया गया । नायिका ने दरवाजा खोला तो पति के स्थान पर एक नाटी सी स्त्री आकृति उसे धकियाकर भीतर घुस आई। नायिका सकते में आ गई । ''उसकी दृष्टि में बटुर आए भय और संदेह ने किशोरी की बदहवासी को चिकोटी भरी–हमारी रच्छा ... गुंडे हमरे पीछे हैं ... बचाय लो ...! सूखी सहमी ऑखों के कोरों के तट पर एक नन्ही–सी कॉपती लहरी उमड़ी और उसे भिगोने को–सी अरराती बढ़ आई। विनती में जुड़ी कलाइयों की खरोचों पर पपड़िया रहे रक्तकण उसके संग हुई जबरई की चुगली खा रहे थे ।''[8] नायिका अभी तक अचम्भित और सकते में थी, कुछ भी प्रतिक्रिया न दे पाई तब ''उसकी मौन दुविधा ने किशोरी को आतंकित कर दिया । कहीं गृहस्वामिनी उसे घर से निकाल कर बाहर मॅडराते चील–कौवों को परोस दे । फूटती हिचकियों को बरबस सुआए होठों में भींचने की असफल कोशिश करती हुई वह विगलित सी उसके पैरों में दोहरी हो आई–बड़ी मुश्किल से पिरान बचाय के भागे हैं ... इज्जत बचाय लो हमारी ... हमारी माई समान हो ... तोहार उपकार जिनगी–भर न बिसरब ...''[9] नायिका द्रवित हो उठी, उसे आश्रय दिया और लड़की से इस स्थिति में पहुँचने का कारणा पूछा तो उसने बताया ''सूखा के चलते न गाोड़ाई, न बुताई ... काम मॉगने सोहनवा के होटल गए ... उहॉ एक डिरेवर से भेंट भई । बोला, हमरे संग सहर चल, अपने सेठ के घर नौकर रखवाय देंगे । पॉच

सौ रूपिया तनखाह मिली । रहना–खाना घर ही पर, अपने लिए क्या, बचा–बुचू के माई को मनीआर्डर करवाती रहना ... हमहू सोचे, पैसा पाय के माई की रिस जाती रहेगी ... पचास रूपिया दिया । बोला, अपने संग हम ठेला में लिवाय लेंगे... सो हम ... ××× सेठ की नौकरी फरेब थी, डिरेवर हमको धोखा दिया ... ××× इहॉ लाके लालू दलाल के हाथ बिका दिया ... चार हजार का सौदा पटा ... लालू हमसे धन्धा करवाने को मार–कुटाई करने लगा ... हम हाथ–गोड जोड़ते रहे– हमको छॉडि दे, हमसे नहीं होगा ... आज सुबह बहुत जबरई किया, हम खिड़किया से कूदि के भागे ...''[10] इस लड़की का नाम गेंदा था, इस गेंदा जैसी हजारों लड़कियॉ अपनी विवशताओं के चलते दलालों के हत्थे चढ़ जाती हैं और इतनी सौभाग्यशाली नहीं होती कि निर्दयी दलालों के चुॅगल से छूट पाएॅ, उम्र भर के लिए नरक में धकेल दी जाती हैं, यह भी हमारे आधुनिक समाज का एक निर्मम, कटु और घिनौना सत्य है ।

निस्संदेह आधुनिक भारतीय समाज नई–नई समस्याओं से जूझ रहा है । एक ओर जहॉ हमने विभिन्न क्षेत्रों में बुलंदियों को छुआ है वहीं दूसरी ओर वैश्वीकरण के इस दौर में अपने नैतिक मूल्यों को खोया भी है । मूल्यों और चरित्र का ऐसा पतन कम–से–कम खुले रूप में ऐसे नहीं दिखाई देता था जैसा आज के दौर में खुलेआम ही दिखाई देता है, जो अत्यन्त दुखद, त्रासद और भयावह है । आधुनिक कालीन हिन्दी कहानीकारों ने मूल्यों की इस गिरावट को बड़ी सूक्ष्मता से परखा, पकड़ा और अपने पाठक के समक्ष रखा सम्भवतः इसी आशा से कि स्थितियों में सुधार हो सके, कुछ कदम सुधार की दिशा में भी उठ सकें ।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूचि

1. मुआवजा– जगदम्बा बाबू गॉव आ रहे हैं (लेखिका– चित्रा मुद्गल), पृष्ठ संख्या 25
2. लकड़बग्घा– जगदम्बा बाबू गॉव आ रहे हैं (लेखिका– चित्रा मुद्गल), पृष्ठ संख्या 68
3. बेईमान–जगदम्बा बाबू गॉव आ रहे हैं (लेखिका– चित्रा मुद्गल), पृष्ठ संख्या 76
4. बेईमान–जगदम्बा बाबू गॉव आ रहे हैं (लेखिका– चित्रा मुद्गल), पृष्ठ संख्या 77
5. प्रमोशन–जगदम्बा बाबू गॉव आ रहे हैं (लेखिका– चित्रा मुद्गल), पृष्ठ संख्या 117
6. प्रमोशन–जगदम्बा बाबू गॉव आ रहे हैं (लेखिका– चित्रा मुद्गल), पृष्ठ संख्या 118
7. वाइफ स्वैपी– शून्य (लेखिका– चित्रा मुद्गल), पृष्ठ संख्या 103
8. सौदा– जगदम्बा बाबू गॉव आ रहे हैं (लेखिका– चित्रा मुद्गल), पृष्ठ संख्या 46
9. सौदा– जगदम्बा बाबू गॉव आ रहे हैं (लेखिका– चित्रा मुद्गल), पृष्ठ संख्या 47
10. सौदा– जगदम्बा बाबू गॉव आ रहे हैं (लेखिका– चित्रा मुद्गल), पृष्ठ संख्या 49